Volume-11, No. 1 Feb.-2024, pp. Hin.09-13

मैत्रेयी पुष्पा की कहानियों में नारी वंदन का चित्रण

डॉ0 पूजा रानी
उदय पार्क कालोनी फेस द्वितीय मेरठ,
उत्तर–प्रदेश भारत

भारतीय संस्कृति में नारी का महत्वपूर्ण स्थान है। जिस तरह नारी के बिना पुरूष में तथा समाज में पूर्णता नहीं आ पाती, उसी प्रकार साहित्य भी नारी–विमर्श के बिना पूर्ण नहीं हो सकता। संसार के साहित्य का अस्सी प्रतिशत साहित्य नारी–केन्द्रित है। नारी को पूजनीय मानते हुए स्वामी विवेकानन्द का कहना है कि–'स्त्री पूजन से ही समाज की प्रगति होती है। जिस देश अथवा समाज में नारी का पूजन नहीं होता, वह देश अथवा समाज कभी ऊँचा नहीं उठ सकता।'[1] नारी–विमर्श साहित्य के अन्तर्गत वह समस्त साहित्य आ जाता है जिस साहित्य के केन्द्र में नारी हो और नारी से सरोकार रखने वाले मुद्दों को शिद्दत से उठाया जाता है।

मुख्य शब्द– नारी–विमर्श, नारी–मनोविज्ञान, माँ लगाओं अगूँठा,

'नारी–विमर्श का साहित्यकार उसे माना जाएगा, जिसके हृदय में नारी के प्रति सहानुभूति व समानुभूति हो अर्थात जो नारी के हृदय में पैठ कर सकता है, जो नारी की कसक को पहचानता हो, जो नारी–भावों की अतल गहराइयों में उतर सकता हो अर्थात जिसने नारी के जीवन को जिया हो या जो हृदय नारी–सी कोमलता लिए हो।'[2] भारतीय महिला–कथाकारों यथा – मन्नू भण्डारी, कृष्णा सोबती, प्रभा खेतान, ममता कालिया, अलका सरावगी इत्यादि ने अपने साहित्य में नारी–विमर्श को प्रमुखता प्रदान की है और नारी–विमर्श को एक आन्दोलन के रूप में देखा है।

लेखिका मैत्रेयी पुष्पा भारतीय नारी–विमर्श की एक बड़ी हस्ताक्षर है। नारी–मनोविज्ञान की पारखी मैत्रेयी पुष्पा की कहानियों में नारी–विमर्श के अनेकों चित्र इस तरह बिखरे हुए है कि सहज ही पाठक की आत्मा को झकझोर देते है। लेखिका नारी को केन्द्र मानकर चली हैं जिनकी कहानियाँ ग्रामीण अंचल एवं महिलाओं के इर्द–गिर्द ही घूमती है। इन कहानियों की नारियाँ प्रायः अति निम्न वर्ग या निम्न मध्यवर्ग की है जिस पर दो–दो लाछंन है – दलित होना और नारी होना। अन्याय की विभिन्न स्थितियों एवं प्रकारों से गुजरती नारी की मौन वाणी का विस्फोट सम्भवतः उनकी कहानियों में है। मैत्रेयी पुष्पा ने अपनी कहानियों में नारी–विमर्श से जुड़े विभिन्न मुद्दों को बड़ी संजीदगी से उठाया है।

मैत्रेयी पुष्पा का कहानी संग्रह 'चिन्हार' अपना–अपना आकाश, बेटी, सहचर, बहेलिये, मन नाँहि दस–बीस, हवा बदल चुकी है, आपेक्ष, कृतज्ञ, भँवर, सफर के बीच, केतकी, चिन्हार–इन छोटी एवं बड़ी कहानियों को अपने में समेटे हुए है। इनमें उच्च दीक्षित परिवारों में पली–बढ़ी नारी के आहत अहम् की कहानियाँ नहीं है, बल्कि देश की अस्सी प्रतिशत जनता का प्रतिनिधित्व करती ग्रामीण स्त्री की व्यथा–कथा एवं संघर्ष की कहानियाँ हैं। उसकी बेबसी, लाचारी, अपनो द्वारा प्रताड़ित, उपेक्षित जीवन–जीने को मजबूर– इन्हीं दुःख दर्द की घटनाओं के ताने–बाने से बुनी हुई ये कहानियाँ इक्कीसवीं शताब्दी की देहरी पर दस्तक देते हुए भारत के ग्रामीण समाज का आईना है। ''माँ लगाओं अगूँठा!'' मंझले ने अँगूठे पर स्याही लगाने की तैयारी कर ली, लेकिन उन्होंने चीकू से पैन माँगकर टेढ़े–मेढ़े अक्षरों में बड़े मनोयोग से लिख दिया ''कैलाशो देवी''[3] ये

पंक्तियाँ 'अपना–अपना भाग्य' कहानी की है, जिसमें उनके बेटे धोखे से उससे दस बीघे जमीन भी अपने नाम करा लेते है। जिसका पता कैलाशो को तब चलता है, जब बेटे अपने पास रखने से इनकार करते हुए बंगलोर भेजने की तैयारी करते हैं। मैत्रेयी पुष्पा जी ने स्त्री के रेहन बुढ़ापे की व्यस्वथा को बड़े ही मार्मिक ढंग से व्यक्त किया है।

चाहे 'अपना–अपना आकाश' कहानी की कैलाशो अम्मा हो, 'चिन्हार' की 'सरजू' 'आपेक्ष' की रमिया, 'भँवर' की विरमा, 'मन नाँहि दस–बीस' की 'चन्दना', 'कृतज्ञ' की 'वसुधा' हो या फिर 'बहेलिये' की 'गिरजा'– इन सब की अपनी–अपनी व्यथाएँ, पीड़ाएँ एवं यंत्रणाएँ हैं। साथ ही साथ अपनी–अपनी सीमाएँ भी है, जो पुरुष वर्ग द्वारा निर्धारित की गई है। इन्हीं सीमाओं में रहकर स्त्री अपना सम्पूर्ण जीवन व्यतीत करती है। लेखिका ने 'बहेलिये' कहानी में इस प्रकार की व्यथा को उजागर किया है– ''गिरजा का जब तक वश चला, गाँव की रूढ़ियों के बीच जन्मी मान–मर्यादा का पूरी तरह पालन करती रहीं। माथे पर घूँघट डाले वे मर्दों के बीच वार्तालाप करने का दुस्साहस नहीं कर सकी थी। लेकिन एक के बाद एक घटित होती दर्दनाक अभिशप्त घटनाओं ने उनके अन्तर को झंझोड़ डाला था।''[4] इसमें कम उम्र में विधवा हुई गिरजा के संघर्षमय जीवन की कहानी है, जिसका विवाह पिता की उम्र वाले पेशकार से होता है। 'चिन्हार' की प्रायः हर कहानी में प्रत्येक परिस्थिति में नारी की स्वभावतः दुर्बलता ही उसे समस्याग्रस्त बनाती है। नारी के दुखों का मूल तीन–चौथाई पुरूष के स्वभाव में तथा एक चौथाई स्वयं उसकी अपनी मन की कमजोरी और संकल्प हीनता के भीतर छिपा होता है। 'सहचर' कहानी की छबीली के चरित्र से ये परिस्थितियाँ भली–भाँति स्पष्ट हो जाती हैं। अशिक्षा, अज्ञानता, रूढ़ियों और अंधविश्वासों के कारण स्त्री की स्थिति निरन्तर गिरती गई और वह पुरूष की भोग्या दास मात्र होकर रह गयी है। पुत्री के मन में यह भावना बचपन से ही कूट–कूटकर भर दी जाती है कि उसका स्थान लड़कों से नीचा है। शैशव के भेदभाव से लड़की का मनोबल मारा जाता है और बड़ी होकर अपनी संभावनाओं की कल्पना भी नहीं कर सकती, उन्हें साकार करना तो दूर रहा। 'बेटी' कहानी के अन्तर्गत लेखिका ने यही बात उजागर की है कि मुन्नी को वे सुख–सुविधाएँ नहीं दी जाती, जो उसके पाँचों भाइयों को दी जाती है। क्योंकि माँ बाप यह मानते हैं कि बेटी तो पराया धन है और बेटे बुढ़ापे का सहारा– ''तू लड़कों की बराबरी करती है! बेटे तो बुढ़ापे की लाठी है हमारी, हमें सहारा देंगे। तू पराये घर का दलिद्दर है! तेरी कमाई नहीं खानी हमें.....।''[5]

पुरूषों द्वारा महिलाओं का शोषण आदिकाल से होता चला आया है। कहीं–कहीं तो देवता भी इससे बच नहीं सके। गौतम–पत्नी अहिल्या इसका उदाहरण है। रावण द्वारा सीता का अपहरण, पांड़वों द्वारा अपनी पत्नी द्रौपदी का जुए के दाँव पर लगाना और दुर्योधन द्वारा कौरवों की भरी सभा में द्रौपदी का चीर–हरण रामायण व महाभारत कालीन घटनाएँ हैं। भारत में मुगलों के आक्रमण के बाद की सती व जौहर कथाएँ इतिहास में पुरूषों के नाम पर कलंक–धब्बों के रूप में सुरक्षित है। 'केतकी' कहानी में केतकी का यौन–शोषण उसके ससुर पंड़ित श्री गोपाल का घनिष्ठ मित्र गन्धर्व सिंह द्वारा होता है। जो उसकी अनुपस्थिति में रात में पानी–पीने के बहाने घर में प्रवेश करता है। केतकी पानी लेने के लिए चली जाती है लेकिन पीछे–पीछे वह मदान्ध कामुक स्वप्नवेशी भी चला आ रहा था। कहाँ जाए अपनी अस्मिता को बचाने, कैसे इस अभेध प्राचीर की भित्तिकाएँ गिरा दे? यही सोच रही थी कि चन्द्र जुन्हाई नहाये आँगन में उनका हाथ उनके सिर पर स्पर्श कर उठा। आलिंगन की सम्पुटता से भयभीत हुई चीख उठी। जैसे गर्दन के ठीक पास छुरी देखकर बकरी ममियाने लगती है। सारा घर चीखों से भर गया।[6] बहरहाल स्थिति शोचनीय है नारी का इस तरह का शोषण किस सीमा तक पहुँचेगा कहना कठिन है। 'चिन्हार' को हिन्दी अकादमी, दिल्ली द्वारा 'साहित्यकृति' सम्मान द्वारा सम्मानित किया जा चुका है जो अपने आप में एक महान उपलब्धि है।

'ललमनियाँ' कहानी–संग्रह, फैसला, रिजक, पगला गई है भागवती! छाँह, बोझ, बिछुड़े हुए, ललमनियाँ, बारहवीं रात, बेटी, सेंध, सिस्टर, तुम किसकी हो बिन्नो? और फैसला इन बारह कहानियों का संग्रह है। 'ललमानियाँ' कहानी संग्रह में स्त्रियों की स्थिति अत्यधिक विचित्र है। ये स्त्रियाँ अन्तर्द्वन्द्व के वैचारिक संघर्ष एवं एक संभ्रम की स्थिति से गुजरती प्रतीत होती है। जहाँ तक परम्परा ढोने का प्रश्न है, अतीत में जीने का सवाल है, वही ये स्त्रियाँ पुरुषों से अधिक पुरातन प्रिय हैं, संक्रीर्ण, रूढ़िवादी और प्रतिक्रियावादी हैं। सदियों से ये परम्परा चली आ रही है पुरुष कई–कई पत्नियाँ, उप–पत्नियाँ रख सकता था, लेकिन एक बाल विधवा को विवाह की इजाजत नहीं थी। 'पगला गई है भागवती!' कहानी को भागो जो बाल–विधवा है, उसे अपनी पूरी जिन्दगी अपने सपनों को मारकर गुजारनी पड़ती है एक विधवा के रूप में। उस बच्ची के सपनों और इच्छाओं की परवाह न तो समाज करता है और न ही उसका परिवार। उसका जीवन अभाव व खालीपन का द्योतक बनकर रह जाता है। उसे हर तरह से अशुभ माना जाता है – ''वह सारे दिन कोठे में छिपी बैठी रही। फिर समय के अन्तराल ने बता दिया कि वह विधवा हो गई। तब से आज तक उसका तन, उसका मन, सम्पूर्ण अस्तित्व विधवा है। होंस–उंमग, पहनना–ओढ़ना, सजना–संवरना उसके लिए वर्जित है। औरते उसे सगुन–सात–मंगल कार्यो से बचाती हैं। यह बात भागो जानती है। वह स्वयं भी देख बचकर निकलती है। 'अठैन' कर देने से सामने वाले के साथ उसका अपना मन भी दुखी हो जाता है।''[7] जिस प्रकार एक कैदी कैदखाने को ही सम्पूर्ण दुनिया समझकर संतुष्ट हो लेता है, पर भीतर ही भीतर एक आक्रोश, एक बदले की भावना उसमें पनपती रहती है। कुछ–कुछ वैसी ही स्थिति भागों की भी हो जाती है, जो तनाव व घुटन में पागल सी हो जाती है।

स्त्रियाँ जो कमाती हैं अपने ऊपर उसका दशवां भाग भी नहीं खर्च कर सकती, क्योंकि पुरुष अपनी कमाई प्रायः अपने ऊपर ही फूँक देते हैं। घर खर्च का जिम्मा वे कम ही लेते हैं। घर व बच्चों का खर्च अधिकतर इन्हें ही चलाना पड़ता है। 'रिजक' की लल्लन के चरित्र से ये सभी बाते भली–भाँति स्पष्ट हो जाती है, जो अपने पति आशाराम को जेल से छुड़ाने के लिए अनेक कठिनाईयों एवं अन्तर्द्वन्द्वों को सहन करती है। लेखिका ने उसकी मनःस्थिति का बहुत ही विशद् वर्णन किया है–''पांवों में सत नहीं बचा, उससे खड़ा नहीं रहा जा रहा था। माथे में घुमेर उठ रही है और कान सनन–सनन क्या करे, क्या ना करे? सोच में डूबी मडैया मे घुसकर धम्म से धरती पर बैठ गई। माथे पर हथेली धरे, घुटने पर कोहनी टेके बैठी रही, ज्यों कोई गमी हो गई हो! सारे नाते–रिश्तेदारों, मिलने–जुलने वालो पर ध्यान आता–जाता रहा। पर कुछ हासिल नहीं। कोई जाना ही चाहता तो अब तक छुड़ा न लाता आशाराम को। सीपर कह रहा था तीन दिन....और उसके लिए आशाराम की जमानत कराना ज्यों सरग के तारे तोड़ना.....।[8] जबकि 'ललमनियाँ' कहानी एक ग्रामीण स्त्री मौहरो की बेबसी, लाचारी, कुंठा, निराशा घुटन एवं कष्टकारक जीवन की व्यथा–कथा है। जिसका पति योगेश उसे गर्भवती छोड़कर चला जाता है। उसे आशा रहती है कि एक दिन वह आयेगा मगर आशा निराशा में तब बदल जाती है जब वह उसे किसी ओर का दुल्हा बना देखती है। उसकी मनःस्थिति का लेखिका ने जिस स्वाभाविकता के साथ वर्णन किया है वह पाठक वर्ग के मानस पर एक अमिट छाप छोड़ जाती है।

''बाबू!'' मौहरो के पाँव ठिठके, दरपन ठहरा!
''हमारे बाबू दूल्हा बने हैं अम्मा!
''हंस मोटर पर बैठे हैं!''
बच्ची ताली पीटकर हँसने लगी।
आते–आते हंस मोटर ऐन समाने से गुजरने लगी। मौहरो की आँखे फट पड़ी,
पुतलियां चूर–चूर हो गयी। दरपन वाले हाथ की नसे ऐंठ गई।
बेहद गुस्से से पिड़कुल माँ का लहंगा खींचती हुई रो पड़ी,
''अम्मा चलो...''उसकी चीख बाजो के शोर पर छा गई। सारे शोर से बेखबर मौहरों दरपन के लश्का

मार–मारकर बेसुध हुई नाचती रही... नाचती ही रही.....एक आदिमनाच''[9]

'जबकि बारहवी रात' कहानी में दहेज के अभाव में सीता अपनी सास के तानों से तंग आकर एक दिन फांसी लगाकर आत्महत्या कर लेती है। दहेज के कारण इस दुःखमय जीवन की शिकार भी नारी है, शिकारी भी अधिकतर नारी ही है। स्त्री का पारंपरिक संसार बड़ा ही विचित्र है और क्रूर भी। यहाँ उसकी सुविधा, एहसासों और सोच के लिए बहुत कम स्थान है। 'सिस्टर' कहानी की सिस्टर डिसूजा रिटायर नर्स हैं जो आजन्म कुँवारी हैं। वह अकेले जीवन यापन करते हुए अनेक व्यंग्यों व कटाक्ष भरी परिस्थितियों से गुजरती है। जनगणना के अनुसार भारत में पुरुष की संख्या स्त्रियों से कुछ अधिक है। फिर भी यहाँ पुत्र–जन्म पर खुशियाँ मनायी जाती हैं। क्यो? इसलिए कि लड़की की सुरक्षा की जिम्मेदारी, दहेज की समस्या, ससुराल में उसके ठीक सामंजस्य व निभाव की चिंता आदि कारणों के अलावा माता–पिता के बुढ़ापे की सुरक्षा की दृष्टि से लड़कों का महत्व आज भी लड़कियों से ज्यादा है। स्त्री ही स्त्री की सबसे बड़ी दुश्मन होती है। ये उपरोक्त बाते ''तुम किसी हो बिन्नी?'' कहानी से पूर्णरूपेण उपस्थित हो जाती है। इसमें आठ वर्षीय बिन्नी अपनी माँ द्वारा ही हीन मानी जाती है, क्योंकि वह तीन बहनें है। लड़के की चाह में उसकी माँ कई–कई कन्या–भ्रूण हत्या करा चुकी है। वह जन्म से ही उसे छूना भी पसन्द नहीं करती है, यहाँ तक कि उसके साथ गाली–गलौच ताने एवं मारपीट आम बात है। यथा–''ढ़ीठ कहीं की! कंजरिया!'' थप्पड़ों की दर्दीली बौछार! मम्मी के हाथ जब चोट से झनझना उठे तो बिन्नी की नरम बाँह पर उन्होंने माँस काटकर ले जाने वाली चकोटी गाढ़ दी.... चीखों भरा रूदन घर में फैल गया।''[10]

जबकि 'फैसला' कहानी की बसुमती अपनी मनःस्थिति का वर्णन मास्टर साहब को चिट्ठी लिखकर करती है। क्योंकि जब वह ग्राम प्रधान बनती है तो उससे वे सारे अधिकार छीन लिये जाते हैं जो एक ग्राम प्रधान के होते हैं। वे अधिकार उसका पति रणवीर प्रयोग करता है, वह तो सिर्फ नाम–मात्र की ही प्रधान है। अगले ग्राम प्रधान में रणवीर चुनाव हार जाता है, सिर्फ एक वोट से, और वह वोट होता है सिर्फ बसुमती का। इन सब बातों का जिक्र वह चिट्ठी में करती है। 'फैसला' कहानी पर एक टेलीफिल्म भी बन चुकी है, जिसका नाम है ''बसुमती की चिट्ठी''।

'गोमा हँसती है' कहानी–संग्रह की कहानियों के केन्द्र में है वह नारी जो अपने सुख–दुःखों, यातनाओं और यंत्रणाओं में तपकर अपनी स्वतंत्र पहचान माँग रही है। इस संग्रह की कहानियों की स्त्री अनैतिक नहीं बल्कि नई नैतिकता को रेखांकित करती है। इस कहानी–संग्रह में 'शतरंज के खिलाड़ी' 'राय प्रवीण' 'प्रेम भाई एण्ड पाटी', 'ताला खुला है पापा', 'साँप–सीढ़ी','उज्रदारी', 'रास' तथा 'गोमा हँसती है' इन कहानियों का समावेश किया गया है। ये लेख वे अनुभव खण्ड हैं, जो स्वयं 'विचार' नहीं हैं परन्तु इन्हीं के आधार पर 'विचार' का स्वरूप बनता है। इस संग्रह की एक–एक कहानी नारी के मन में छिपी चिन्ता, पीड़ा, भय, घुटन एवं कुंठा को भलीभाँति उजागर करती है। सामान्य ग्रामीण स्त्रियाँ अपने भीतर कितना दर्द छुपाये बैठी हैं, इन सबका एहसास 'राय प्रवीण' की सावित्री, 'ताला खुला है पापा' की बिन्दो, 'साँप–सीढ़ी' की सुमन, 'उज्रदारी' की शान्ति, 'रास' की जैमन्ती तथा 'गोमा हँसती है' की गोमती के चरित्र से स्पष्ट हो जाती है। 'राय प्रवीण' कहानी में बाढ़ की चपेट में आने के कारण भूखे मरते लोगों की सहायता के लिए सावित्री अपना सर्वस्व न्यौछावर कर देती है। इसके बदले उच्च वर्गो के लोगों द्वारा उसका दैहिक शोषण होता है और अन्त में अपने पिता एवं छोटी बहन को व्यंग्यों व तानों से बचाने के लिए बेतवा नदी में कूदकर अपनी जानी गँवा देती है– ''करूणा के रास्ते गुजरते हुए लोग सावित्री की बहादुरी तक आ पहुँचे। कहते हैं न, मेरे पूत की बड़ी–बड़ी आँखे.....सावित्री सचमुच की सावित्री निकली। शीलभंग हुआ, पर अपने आदमी का पिछौरा मैला होने से पहले अपनी जान पर खेल गई। बाप को मुँह दिखाने के काबिल नहीं रही तो जल में छलांग लगा दी।

भाई, इन्हीं सतियों के दम पर कायम है, संसार..... ..''।[11]

जबकि 'उज्रदारी' एक ऐसी ग्रामीण विधवा स्त्री शान्ति की व्यथा–कथा है, जो अपने जेठ व जेठानी के अत्याचारों से तंग आकर घर छोड़ देती है और अपने बेटे सोमू के संग आजादपुर में प्रधान लाला के घर शरण लेती है। 'गोमा हँसती है' कहानी में ग्रामीण नारी गोमती का अपने प्रति ईमानदार होना ही बोल्ड होना है, हालांकि वह बिल्कुल नहीं जानती कि वह क्या है जिसे 'बोल्ड होने' का नाम दिया जाता है। नारी चेतना की यह पहचान या उसके सिर उठाकर खड़े होने में ही समाज की पुरुषवादी मर्यादाएँ चटकने–टूटने लगती है। वे नारी को लेकर बनाई गई शील और नैतिकता पर पुनर्विचार की मजबूरी पैदा करती है। डॉ0 राजेन्द्र यादव ने 'गोमा हँसती है' कहानी–संग्रह की प्रशंसा करते हुए कहा है कि 'गोमा हँसती है' सिर्फ एक कहानी नहीं, कथा–जगत की एक महत्वपूर्ण घटना है।''

निष्कर्षतः

लेखिका ने चरित्र एंव वातावरण के चित्रण तथा समस्याओं के प्रत्यक्षीकरण में यथार्थवादी दृष्टिकोण को अपनाया है। उनकी कहानियों में जीवन का सत्य, मनोवैज्ञानिक समस्याएँ, संघर्ष तथा व्यापक जीवन की पूर्णता का संकेत बड़ी सरलता से उपलब्ध हो जाता है। इसके अतिरिक्त नारी शोषण, नारी यौन–शोषण, बाल–विवाह, बेमेल विवाह, परिवार के बीच नारी की स्थिति, विवाहोत्तर सम्बन्ध, विधवा जीवन की त्रासदी, हिंसा, दहेज इत्यादि अलग–अलग सामाजिक मुद्दों को उजागर किया है। लेखिका ने कहानियों में नारी–विमर्श को समकालीन संदर्भो से जोड़कर देखा है। उन्होंने कभी भी नारी की शरीर–यष्टि या बनाव–श्रृंगार का चित्रण करने में बहुत पृष्ठ खर्च नहीं किये, बल्कि जीवन के कर्म क्षेत्र में तरह–तरह से जूझती हुए नारी को उसकी मर्यादाओं, विवशताओं और शक्तियों के साथ चित्रित किया है। मैत्रेयी पुष्पा ठीक कहती है कि–'अगर स्त्री–लेखन जैसी कोई चीज नहीं होती तो आज लिख रही स्त्रियों की नायिकाएँ शरतचन्द्र, जैनेन्द की नायिकाओं से क्यों भिन्न होती? आज स्त्रियाँ जब अपने सच का बयान खुद ही करने लगीं तो साहित्य एक दम से बदल गया। अब एक नई हवा बह रही है। यह सर्वविदित है कि स्त्री को पुरुष की सहानुभूति नहीं चाहिए, सिर्फ बराबरी भर ही नहीं चाहिए, बल्कि बराबरी की भागीदारी भी चाहिए। साथ ही वह अपनी मुक्ति के रास्ते खुद बनाएगी और तय करेगी।'[12] मैत्रेयी पुष्पा की कहानियाँ नारी–विमर्श को एक नए स्तर पर प्रतिष्ठित करती है। जिन्हें लेखिका ने दृश्यात्मक भाषा और गहरे जुड़ाव के साथ आकार प्रदान किया है।

संदर्भ

1. वल्लभदास तिवारी, हिंदी काव्य में नारी, जवाहर पुस्तकालय, मथुरा, प्रथम संस्करण, 1974
2. डॉ0 शोभा पवार 'निंबालकर', हिंदी कहानी और नारी–विमर्श के अहम सवाल, पृ0 12
3. मैत्रेयी पुष्पा, चिन्हार (कहानी–संग्रह), अपना–अपना भाग्य (कहानी), पृ0 16 प्रथम संस्करण, 1991, आर्य प्रकाशन मंडल IX/221, सरस्वती भंडार, गांधीनगर, दिल्ली–110031
4. वही, बहेलिये (कहानी), पृ0 35
5. वही, बेटी (कहानी), पृ0 21
6. वही, केतकी (कहानी), पृ0 128
7. मैत्रेयी पुष्पा, ललमनियाँ (कहानी–संग्रह), पगला गई है भागवती! (कहानी), पृ0 24, प्रथम संस्करण, 1996, किताबघर प्रकाशन, 24, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली, 110002
8. वही, रिजक (कहानी), पृ0 9
9. वही, ललमनियाँ (कहानी), पृ0 138
10. वही, तुम किसकी हो, बिन्नी (कहानी), पृ0 133
11. मैत्रेयी पुष्पा, गोमा हसँती है (कहानी–संग्रह), राय प्रवीण (कहानी), पृ0 48, प्रथम संस्करण, 1998, किताबघर प्रकाशन, पृ0 24, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली–110002
12. मैत्रेयी पुष्पा, अमर उजाला, 10 मार्च, सन् 2002